अमर उजाला

नई दिल्ली । बुधवार, 26 जून 2019

प्रवाह

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक

स्थापना वर्ष : 1948

यदि आपके विचार सही, लक्ष्य ईमानदार और प्रयास सांविधानिक हैं तो आपकी सफलता निश्चित है।
- लोकमान्य तिलक

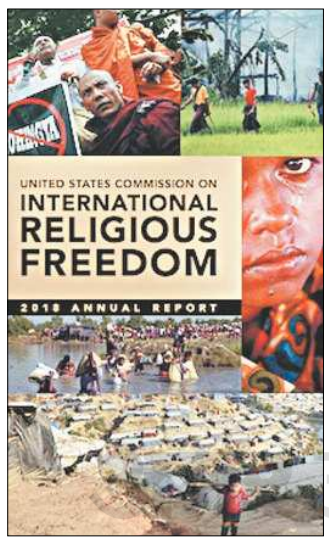

भारत में अल्पसंख्यकों की धार्मिक स्वतंत्रता पर सवाल उठाने वाली अमेरिकी रिपोर्ट न केवल अतिरेक है, बल्कि यह हमारे अंदरुनी मामले में दखल भी है। हालांकि भीड़ की हिंसा से कारगर ढंग से निपटने के उपाय भी किए जाने चाहिए।

अमेरिका की नसीहत

अमेरिकी विदेश मंत्रालय ने अपनी अंतरराष्ट्रीय धार्मिक स्वतंत्रता रिपोर्ट में भारत में अल्पसंख्यकों की असुरक्षा और धार्मिक स्वतंत्रता पर हमले को लेकर जो खाका खींचा है, वह जमीनी सच्चाई से व्यापक रूप से मेल नहीं खाता। ध्यान रहे, इस रिपोर्ट में अमेरिका के धार्मिक मामलों के आयोग ने जिन 16 देशों में स्थिति को विशेषरूप से चिंताजनक बताया है, उनमें भारत नहीं है। इन देशों में म्यांमार, चीन, एरिट्रिया, ईरान, सऊदी अरब, सूडान, ताजिकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, उज्बेकिस्तान, सेंट्रल अफ्रीकन रिपब्लिक, नाइजीरिया, पाकिस्तान, रूस, सीरिया और वियतनाम शामिल हैं। ऐसा लगता है कि बदलती-भू-राजनीति के बावजूद अमेरिका वैश्विक व्यवस्था में अपनी चौधराहट कायम रखना चाहता है, जबकि नस्लीय भेदभाव और शरणार्थियों के उत्पीड़न के मामले में उसका अपना रिकॉर्ड कोई अच्छा नहीं है। रिपोर्ट में भारत के बारे में की गई टिप्पणियां न केवल अतिरेक है, बल्कि इन्हें देश के आंतरिक मामलों में दखल माना जाना चाहिए। भारत ने अमेरिका की इस एकतरफा रिपोर्ट को पूरी तरह से खारिज किया है और विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने स्पष्ट शब्दों में कहा है, 'भारत को अपनी धर्मनिरपेक्ष साख, सबसे बड़ा लोकतंत्र और बहुलतावादी समाज होने पर गर्व है, जोकि लंबे समय से सहिष्णुता और समावेश को लेकर प्रतिबद्ध है। भारतीय संविधान ने अपने सभी नागरिकों को मौलिक अधिकार दिए हैं, जिनमें अल्पसंख्यक समुदाय भी शामिल हैं।' हालांकि यह भी सच है कि हाल के वर्षों में गोरक्षा और धर्म के नाम पर हिंसा और हत्या की घटनाएं हुई हैं और ऐसे मामलों में न्यायपालिका तक को दखल देना पड़ा है। हाल ही में झारखंड में एक मुस्लिम युवक को कथित रूप से मोटरसाइकिल चोरी करने के आरोप में भीड़ ने मार डाला। उससे जबर्दस्ती 'जय श्री राम' के नारे लगवाने का वीडियो भी वायरल हुआ है। आज के भारत में इस तरह की हिंसा और धार्मिक आधार पर उत्पीड़न की कोई जगह नहीं होनी चाहिए। बेशक, ऐसे मामलों में पुलिस को बिना किसी दबाव के अपना काम करना चाहिए, लेकिन ऐसे मामले भी सामने आए हैं, जब उसने राजनीतिक निर्देशों पर काम किया है। इस रिपोर्ट से हमें नसीहत लेने की भले ही जरूरत न हो, लेकिन इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि धार्मिक या लैंगिक आधार पर की जाने वाली ऐसी हिंसा से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देश की नकारात्मक छवि बनती है।

चौतरफा दबाव से घिरीं दीदी

पिछले हफ्ते राज्य के हड़ताली डॉक्टरों को आंदोलन खत्म करने के लिए राजी करने के वास्ते पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी को जिस तरह से उनके आगे झुकना पड़ा, उससे पता चलता है कि भारतीय राजनीति में तूफान खड़ा कर देनी वाली नेता कितनी कमजोर हो चुकी हैं। कुछ दिन पहले ही उन्होंने डॉक्टरों से कहा था कि वे काम पर नहीं लौटे, तो उन्हें बर्खास्त कर दिया जाएगा। ऐसे में यह कदम उस नेता के लिए अपमानजनक कहा जा सकता, जिन्हें किसी टकराव में पीछे हटते नहीं देखा गया। यह दिखाता है कि हाल ही में हुए लोकसभा चुनाव में उनकी पार्टी के खराब प्रदर्शन और राज्य में भाजपा से मिल रही कड़ी चुनौती के कारण किस तरह से उनका आत्मविश्वास डगमगा गया है।

पिछले कई वर्षों से दीदी के करीबी रहे एक नेता ने निजी बातचीत में स्वीकार किया कि उनके लंबे उतार-चढ़ाव से भरे करियर में वह कभी ऐसे दबाव में नहीं दिखीं, जैसी वह आज नजर आ रही हैं। यह गौर करने लायक है कि तृणमूल कांग्रेस की जो तेजतर्रार नेता कभी चुनौतियों से टकराने में पीछे नहीं रहती थीं, आज ऐसा लगता है कि अपने विपक्षियों से मुकाबला करने को लेकर दुविधा में हैं। डॉक्टरों की हड़ताल को लेकर पहले तो उन्होंने अनावश्यक रूप से अड़ंगा लगाया और फिर जिस तरह से उन्होंने उनके आगे समर्पण किया, उससे पता चलता है कि उनकी ढीली होती पकड़ किस तरह से उनके प्रशासनिक नियंत्रण और राजनीतिक इच्छा शक्ति दोनों को ही प्रभावित कर रही है।

तृणमूल कांग्रेस की जो तेजतर्रार नेता कभी चुनौतियों से टकराने में पीछे नहीं रहती थीं, आज ऐसा लगता है कि अपने विपक्षियों से मुकाबला करने को लेकर दुविधा में हैं

अजय बोस, वरिष्ठ पत्रकार

वास्तव में 2011 में ताकतवर मार्क्सवादी साम्राज्य को परास्त करने के बाद से ममता बनर्जी ने पश्चिम बंगाल के राजनीतिक परिदृश्य पर इस तरह से प्रभुत्व कायम कर लिया था कि वह अब यह स्वीकार करने को तैयार नहीं दिख रही हैं कि राजनीतिक नियति का पहिया एक बार फिर घूम रहा है और इस बार उसके नीचे वह खुद और उनकी पार्टी आ गई है। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री दोहरे जोखिम का सामना कर रही हैं। उन्हें न केवल स्थानीय स्तर पर गंभीर चुनौती का सामना करना पड़ रहा है, क्योंकि राज्य की आबादी के विभिन्न तबके उन्हें बेदखल करने के लिए भाजपा के पीछे गोलबंद हो रहे हैं। वहीं वह भाजपा की अगुआई वाली केंद्र सरकार के निशाने पर भी हैं, जो कि ऐसा लगता है कि ऐसे हर संस्थान का इस्तेमाल कर रही है, जो उन्हें नुकसान पहुंचा सकता है। नगरपालिका से लेकर विधानसभा स्तर तक के नेताओं के पार्टी छोड़कर भाजपा का दामन थामने का जो सिलसिला चल रहा है, उससे तृणमूल को खासा नुकसान हुआ है। पार्टी के रोजाना हो रहे इस क्षरण से ममता बेबस नजर आ रही हैं और भारत में आज जिस तरह की राजनीतिक हवा बह रही है, उसमें दल बदल कानून निष्प्रभावी हो गया है। अपनी पार्टी की दुर्दशा को लेकर दीदी शिकायत करने की स्थिति में भी नहीं हैं, क्योंकि अतीत में मार्क्सवादियों और कांग्रेस को कमजोर करने के लिए उन्होंने खुद यही कौशल अपनाया था।

पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री को कानून व्यवस्था की स्थिति को नियंत्रित रखने का भी लगातार दबाव झेलना पड़ रहा है, क्योंकि वहां उनकी पार्टी और भाजपा के कार्यकर्ताओं के बीच टकराव बढ़ रहा है। ऐसा इसलिए भी है, क्योंकि भाजपा ने चुनाव में राज्य में अच्छा प्रदर्शन तो किया ही है और वह लगातार दूसरी बार मजबूती के साथ केंद्र की सत्ता में भी आ गई है। अमित शाह के गृह मंत्री बनने और राज्य में ऐसे राज्यपाल के होने से, जो लगता नहीं कि ममता के प्रति बहुत सहानुभूति रखते हों, चौतरफा घिरी राज्य सरकार का प्रशासनिक सिरदर्द बढ़ना ही है।

दिल्ली की मजबूत केंद्र सरकार के खिलाफ बंगालियों में प्रांतीय उप राष्ट्रवाद का आह्वान कर भाजपा को घेरने की ममता की कोशिश सिरे नहीं चढ़ पा रही है। दक्षिणी राज्यों तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और केरल में जहां भाजपा को बाहरी बताकर किनारे किया जा सकता है, इसके उलट पश्चिम बंगाल में पार्टी असाधारण ढंग से उभर रही है, जैसा कि हाल के लोकसभा चुनाव में उसके मत प्रतिशत और सीटों में हुई वृद्धि दिखाती है। मुख्यमंत्री ने राज्य में रह रहे लोगों से बांग्ला सीखने की मांग कर भावनात्मक भाषायी मुद्दा छेड़ने और भाजपा को हिंदी पट्टी की पार्टी बताने की कोशिश की, लेकिन उनके इस कदम को ज्यादा समर्थन नहीं मिला।

वास्तविकता यह है कि पश्चिम बंगाल में गरीब लोगों की बड़ी आबादी जिनमें संथाल आदिवासी, दलित और पिछड़ी जातियों के साथ ही अच्छी खासी संख्या में मौजूद गैर बंगाली आबादी के लिए बांग्ला भाषा या संस्कृति शायद ही भावनात्मक मुद्दा है और क्षेत्रीय उप राष्ट्रवाद में ऐसे पर नहीं लगे हैं कि वह सियासी उड़ान भर सके। जहां तक उच्च जाति के बंगाली भद्रलोक मध्य वर्ग की बात है, जो कि अपनी पारंपरिक भाषा और संस्कृति से अधिक जुड़ाव महसूस करता है, तो वह दीदी का बहुत समर्थन नहीं करता। बल्कि बंगाली भद्रलोक में पिछले कुछ समय से मुस्लिम मौलवियों की पैरवी करने और अल्पसंख्यक वोट बैंक की उनकी राजनीति के कारण उनके प्रति बेरुखी है।

लगातार बढ़ती राजनीतिक चुनौतियों के बीच राज्य में उनके एकमात्र राजनीतिक विपक्ष को लेकर ममता बनर्जी के पक्ष में एक बात है। भाजपा को अभी कोई ऐसा स्थानीय नेता तलाशना है, जिसका कद और विश्वसनीयता ऐसी हो कि वह दूर से ही सही मुख्यमंत्री को चुनौती दे सके। ऐसे दौर में जब आदमकद राजनीतिक हस्तियां देश में शासन कर रही हों, यही एक बात ममता बनर्जी के पक्ष में हो सकती है। यदि केंद्र की भाजपा सरकार ने राज्य में कानून व्यवस्था की बिगड़ती स्थिति को लेकर उन्हें सत्ता से बेदखल किया, तो इससे ममता को ही मदद मिलेगी और वह खुद को पीड़ित बताएंगी।

अंतर्ध्वनि

>> डोनाल्ड हॉल

इलियट को पढ़ने के बाद मेरा कवि बनना तय हो चुका था

बारह साल की उम्र में अचानक ही मुझे हॉरर फिल्मों में दिलचस्पी पैदा हो गई थी। पड़ोस के लड़के ने मुझसे कहा कि डरावनी फिल्में अच्छी लगती हैं, तो एडगर एलन पो को पढ़ो। पो को पढ़ने के बाद मैं सचमुच उनका मुरीद बन गया। अब मैं उन्हीं की तरह बनना चाहता था। मैंने पहली जो कविता लिखी, वह पो की तरह नहीं थी, लेकिन मुझे आश्वस्त करती थी। उसी समय संयोग से एक लड़के से मेरी मुलाकात हुई, जिसने कविता लिखने के लिए स्कूल की पढ़ाई छोड़ दी थी। उसने मुझे येल के कुछ छात्रों के बारे में बताया, जो साहित्य और कविता की गंभीर जानकारी रखते थे। उन छात्रों ने, जिन्हें मैं भैया कहता था, मुझे टी.एस. इलियट के बारे में बताया। अपनी सारी जमा पूंजी जोड़कर दो डॉलर, पचास सेंट्स में मैं इलियट समग्र ले आया। इलियट की उन रचनाओं ने मुझे बताया कि कविता क्या होती है। अब मेरे जीवन का लक्ष्य तय हो चुका था। अब स्कूल से लौटने के बाद रोज मैं एक से दो घंटे कविता लिखने का काम करता था। मैं सौभाग्यशाली था कि मेरे माता-पिता कविता के प्रति मेरी दिलचस्पी को प्रोत्साहित करते थे। मेरे जन्मदिन और क्रिसमस के मौकों पर वे हमेशा मुझे कविता की कोई नई किताब उपहार में देते थे। सोलह की उम्र में लघु पत्रिका में मेरी पहली कविता प्रकाशित हुई। मुझे आज भी वह दिन याद है, जब मैंने रॉबर्ट फ्रॉस्ट को देखा था। बाद में मेरी कई बार उनसे बात हुई। कभी-कभी शाम को वह पोएट्री वर्कशॉप का आयोजन करते थे। शुक्र है कि तब उन्होंने मेरी कविताएं नहीं पढ़ी थीं, क्योंकि वह बेहद मुंहफट थे। वैसे तो एक कवि के रूप में मेरे जीवन में आनंद के अनेक अवसर आए हैं। लेकिन मेरे लिए वे अवसर सबसे यादगार थे, जब मैंने टी.एस. इलियट, एजरा पाउंड और मैरिएने मूर का द पैरिस रिव्यू के लिए इंटरव्यू किया था। शुरू में मैंने गद्य को गंभीरता से नहीं लिया था, पर बाद में गद्य भी खूब लिखा।

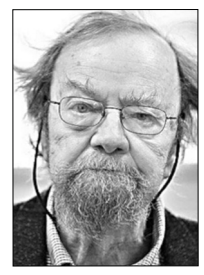

-चर्चित अमेरिकी कवि और आलोचक।

मंजिलें और भी हैं

>> राघवेंद्र कुमार

दुर्घटना में दोस्त की मौत के बाद बांटने लगा हेलमेट

सड़क पर गलत दिशा में गाड़ी चलाना, लाल बत्ती को दरकिनार करके ट्रैफिक नियमों की अवहेलना आम बात हो गई है। आए दिन इन छोटी-छोटी लापरवाहियों की वजह से हुई दुर्घटनाओं में मौत की खबरें आती रहती हैं। ऐसी ही एक दुर्घटना में मेरे दोस्त की जान चली गई। मैं मूल रूप से बिहार का हूं, और अभी उत्तर प्रदेश के नोएडा में रहता हूं। यह वर्ष 2014 की बात है। मेरे दोस्त कृष्ण कुमार ठाकुर मोटरसाइकिल से कहीं जा रहे थे, रास्ते में किसी बड़े वाहन ने पीछे से उन्हें टक्कर मार दी, उनके सिर में गंभीर चोट आई और इलाज के दौरान उनकी मौत हो गई। अस्पताल में जब डॉक्टरों से मेरी बात हुई, तो उन्होंने कहा कि अगर कृष्ण ने हेलमेट पहना होता तो शायद वह बच जाता। इस बात ने मुझे सोचने पर मजबूर कर दिया। कृष्ण अपने मां-बाप का इकलौता बेटा था। उनकी इस हालत ने मुझे अंदर तक हिला दिया, तभी से मैंने हेल्मेट के प्रति जागरूकता को लेकर कुछ करने की ठानी। इसके बाद हर शनिवार और रविवार मैंने आस-पास की जगहों पर जाकर लोगों को हेलमेट बांटना शुरू कर दिया। ट्रैफिक सिग्नल पार करते समय जो भी मुझे बिना हेलमेट के दिख जाता, मैं उसे जाकर मुफ्त में हेलमेट देता और मोटरसाइकिल चलाते वक्त उसे पहनने की सलाह भी देता।

एक घर भी खरीदा था, पर इस अभियान में धन की कमी आड़े न आए इसलिए मुझे उसे बेचना पड़ा।

जब मैं कृष्ण के माता-पिता से मिलने के लिए उनके घर गया था, तो उसकी किताबें अपने साथ ले आया। वो किताबें मैंने एक जरूरतमंद बच्चे को दे दी। एक दिन मुझे एक फोन आया। फोन पर दूसरी तरफ उस बच्चे की मां थी, जिसे मैंने कृष्ण की किताबें दी थीं। बच्चे की मां ने कहा कि उन किताबों की मदद से उनके बेटे ने न सिर्फ ठीक से पढ़ाई की है, बल्कि उसने स्कूल में टॉप भी किया है। उनकी बातें सुनकर मुझे सुकून मिला। तभी मुझे लगा कि अगर हर जरूरतमंद बच्चे को समय पर किताबें मिल जाएं तो बेशक बड़ा बदलाव लाया जा सकता है। फिर मैंने संकल्प लिया कि जिस किसी के भी पास पुरानी किताबें हैं और अब उनके काम की नहीं हैं, वह शख्स वो किताबें मुझे दे और मैं किताबों के बदले में हेलमेट दूंगा। इस अभियान का असर यह हुआ कि स्कूल से लेकर कॉलेज की पढ़ाई तक, सभी तरह की किताबें मेरे पास हैं और वह जरूरतमंद तक पहुंच भी रही हैं। किताबों के बदले हेलमेट देने की कोशिश अब रंग ला रही है। अब जो कोई भी मेरे पास हेलमेट लेने आता है, तो वह पहले से ही किताबें लेकर आता है। अब मेरी इस मुहिम से स्कूल-कॉलेज के छात्र भी जुड़ने लगे हैं। अपने स्कूल-कॉलेज में वह 'किताब दान अभियान' आयोजित करके मेरे लिए बहुत-सी किताबें इकट्ठा भी कर देते हैं। देश के करीब 23 शहरों में मैंने 'बुक डोनेशन बॉक्स' लगाए हैं, ताकि लोग यहां पर किताबें दे सकें। एक तरफ जहां गरीब माता-पिता और बच्चे मेरी इस पहल से खुश हैं, वहीं प्राइवेट स्कूलों में मेरे इस अभियान को लेकर नाराजगी भी है। इसलिए बहुत बार स्कूलों के प्रबंधन ने मुझे अपने यहां बच्चों से मिलने या सेमिनार करने की इजाजत नहीं दी। मैंने अपनी कमाई से एक घर भी खरीदा, लेकिन इस अभियान में धन की कमी आड़े न आए इसलिए मुझे उसे बेचना पड़ा। इस अभियान की फंडिंग मैं नौकरी के दौरान की गई बचत से ही कर रहा हूं। मेरी कोशिश है कि एक दिन ऐसा आए, जब हर एक बच्चे के पास पढ़ने के लिए किताबें हों और कोई भी व्यक्ति बिना हेलमेट के दुपहिया वाहन नहीं चलाए। मैं चाहता हूं कि ऐसा कोई नियम बने, जिससे बिना हेलमेट पहने हुए कोई भी शख्स टोल पार नहीं कर पाए। यदि हम पूरे देश में ऐसा कर पाए, तो निश्चित तौर पर लोगों की मानसिकता में बदलाव आएगा।

जम्मू-कश्मीर की भाषा नीति

यहां त्रिभाषा नीति उल्टी बह रही है। जिस मातृभाषा को सबसे ज्यादा अहमियत दी जानी चाहिए, वह सबसे पीछे है, और जो पराई भाषा सबसे बाद में होनी चाहिए, वह सबसे आगे है। इससे बच्चों की पढ़ाई पर असर पड़ रहा है और वह देश की मुख्यधारा में नहीं आ पा रहे।

जम्मू-कश्मीर इन दिनों कई तरह के बदलावों से गुजर रहा है। उम्मीद की बहुत-सी किरणें दिखाई पड़ रही हैं। ऐसे में यहां की भाषा नीति पर चर्चा होनी चाहिए। किसी भी समाज के निर्माण में भाषा की अहम भूमिका होती है। आज जो हाल जम्मू-कश्मीर का है, उसमें कहीं न कहीं इसकी भाषा नीति का भी दोष है। इसमें कोई दो राय नहीं कि जम्मू-कश्मीर राज्य की भाषा नीति निहायत ही असंगत और अविवेकपूर्ण रही है।

आज जो भाषा नीति यहां लागू है, उसकी जड़ें वर्ष 1944 के आस पास शेख अब्दुल्ला की नेशनल कांफ्रेंस द्वारा प्रस्तुत 'नया कश्मीर' नामक दस्तावेज में दिखाई पड़ती हैं। हालांकि उससे पहले महाराजा के दौर में भी उर्दू यहां की राजभाषा थी। तब यहां की शिक्षा और भाषा नीति देश के अन्य प्रांतों, खासकर पड़ोसी पंजाब की तर्ज पर थी। कायदे से आजादी के बाद कश्मीरी और डोगरी को यहां की राजभाषा होना चाहिए था, लेकिन शेख अब्दुल्ला ने उर्दू को यहां की राजभाषा बनाए रखा। जम्मू-कश्मीर में मुख्यतः कश्मीरी, डोगरी और लदाखी या भोटी भाषाएं प्रचलन में हैं। वैसे इनके अलावा शीना, गोजरी, पंजाबी, पहाड़ी, भद्रवाही और किश्तवाड़ी भाषाएं भी हैं, जिनके बोलने वालों की अच्छी खासी संख्या है।

कश्मीरी भाषा पहले शारदा लिपि में लिखी जाती थी। यह देवनागरी की ही बहन है। लेकिन धीरे-धीरे मुसलमानों ने इसके लिए अरबी लिपि को अपनाना शुरू कर दिया, जिसके चलते शारदा लिपि विलोपन की ओर बढ़ चली। कश्मीरी भाषा भी धार्मिक आधार पर बंट गई। हाल के वर्षों में कश्मीर से बाहर रहने वाले कश्मीरी पंडित देवनागरी में कश्मीरी को लिखने लगे, जबकि घाटी के मुसलमान अरबी लिपि में इसे लिखते हैं। यानी भाषा और लिपि के

गोविंद सिंह

जरिये लोगों को उनकी जड़ों से काटने का सिलसिला शुरू हो गया। शिक्षा में यहां अंग्रेजी सर्वोपरि है। पहली कक्षा से ही यह अनिवार्य कर दी गई। दूसरी भाषा हिंदी या उर्दू है। मुस्लिम इलाकों में जो स्कूल हैं, वहां उर्दू और हिंदू बहुल इलाकों में हिंदी पढ़ाई जाती है। एक साथ दोनों पढ़ाने की व्यवस्था नहीं है। हाल के वर्षों में डोगरी, कश्मीरी और लदाखी की व्यवस्था कुछ-कुछ स्कूलों में शुरू हुई है, लेकिन यह बहुत कम है। इस मामले में गोजरी और पहाड़ी अभी बहुत पीछे हैं। प्रथम भाषा होने के बावजूद अंग्रेजी की हालत भी अच्छी नहीं है। जम्मू और लद्दाख क्षेत्र में हिंदी वैसे ही बोली और समझी जाती है, जैसे हिंदी भाषी इलाकों में। पढ़ाई का माध्यम मातृभाषा न होने से बच्चों की अवधारणाएं स्पष्ट नहीं हो पातीं। इसलिए उच्च शिक्षा में पहुंचने वाले बच्चों की न अंग्रेजी अच्छी है और न हिंदी। दुर्भाग्य यह है कि घाटी में हिंदी गायब कर दी गई है। जबकि हर आमो-खास हिंदी बोलता-समझता है, लेकिन लिख नहीं सकता। नब्बे के दशक में जब कश्मीरी पंडितों को घाटी से भगाया गया, तब हिंदी सिखाने वाले भी नहीं बचे। कट्टरपंथियों के साथ ही सरकारों की भूमिका भी संदिग्ध रही। इस वजह से भी आज घाटी के बच्चे देश की मुख्यधारा से कट गए हैं।

राजभाषा उर्दू की हालत और भी अजीबोगरीब है। जम्मू में उर्दू जानने वालों की संख्या मुट्ठी भर भी नहीं है। लेकिन आप पुलिस में कोई शिकायत दर्ज करना चाहें तो वह उर्दू में ही लिखी जाएगी। जिन महकमों का संबंध जनता से है, वहां उर्दू ही राजभाषा है। लेकिन उच्च नौकरशाही में अंग्रेजी का वर्चस्व कायम है। इस प्रकार यहां त्रिभाषा नीति उल्टी बह रही है। जिस मातृभाषा को अहमियत दी जानी चाहिए, वह सबसे पीछे है, और जो पराई भाषा सबसे बाद में होनी चाहिए, वह सबसे आगे है। इससे बच्चों की पढ़ाई पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है और वह देश की मुख्यधारा में नहीं आ पा रहे। इसलिए अब समय आ गया है, जब भाषा नीति में सुधार हो। चाहे दूसरी या तीसरी भाषा के तौर पर ही सही, हिंदी पूरे प्रदेश में पढ़ाई जाए। कश्मीरी और डोगरी को उनका जायज हक मिले। तभी यहां की अगली पीढ़ियां अपनी जमीन से जुड़ेंगी और देश के साथ चलने में सक्षम होंगी।

हरियाली और रास्ता

दो सहेलियां और पानी का प्रयोग

दो सहेलियों की कहानी, जिन्हें उनके शिक्षक ने जीवन का महत्वपूर्ण पाठ सिखाया।

सोमा और विनीता दो सहेलियां थीं। एक दूसरे के प्रति उनमें बहुत प्यार और लगाव था। दोनों बचपन से एक-दूसरे के साथ बड़ी हुई थीं। उनके बीच दोस्ती इतनी गहरी थी कि लोग उनकी दोस्ती की मिसालें दिया करते थे। वे एक साथ पढ़ती थीं और एक साथ ही कॉलेज जाती थीं। लेकिन एक दिन उनकी जिंदगी में ऐसा तूफान आया, जिसने उनकी जिंदगी बदल कर रख दी। किसी ने उनके बीच गलतफहमी की ऐसी दीवार खड़ी कर दी कि उन दोनों ने बिना एक-दूसरे से बात किए खुद को एक-दूसरे से अलग कर लिया। दोनों मन ही मन बहुत दुखी थीं, लेकिन वे अपने अहम की वजह से वह एक-दूसरे से बात नहीं कर पा रही थीं। एक दिन उनके एक प्रोफेसर ने उन दोनों के बदले स्वभाव को भांप लिया। उन्होंने दोनों सहेलियों के बीच के दुराव को खत्म करने का फैसला किया। उन्होंने दोनों को लैब में बुलाया और दोनों को एक कटोरे में पानी उबालने के लिए कहा। पानी उबलने पर कहा, अब इसका ऐसे इस्तेमाल करो कि पानी का स्वरूप न बदले, लेकिन जो इस पानी में पड़े, उसका स्वरूप बदल जाए। सोमा ने पानी में दो आलू डाल दिए, जो पहले सख्त थे, और पानी में उबलने के बाद नरम हो गए। वहीं विनीता ने पानी में दो अंडे डाल दिए, जो उबलने के बाद सख्त हो गए। प्रोफेसर दोनों से बहुत खुश हुए और बोले, तुम दोनों ने बहुत अच्छा काम किया। अगर तुम दोनों ने एक ही जैसे पदार्थ पानी में डाले होते, तो पानी के विपरीत लक्षणों को नहीं पहचान पाते। एक तरफ पानी सख्त को नरम बना देता है और दूसरी तरफ वही पानी नरम को सख्त। यह सिर्फ तुम दोनों के विपरीत नजरियों की वजह से हुआ है। सोमा और विनीता को प्रोफेसर की बात तुरंत समझ में आ गई। उन दोनों ने एक दूसरे से क्षमा मांगी और पुनः दोस्त बन गईं।

दूसरों के नजरियों को समझने से अपने नजरिये का भी विस्तार होता है।

खुली खिड़की

शीर्ष विश्वविद्यालयों की संख्या

उच्च शिक्षा के लिए छात्र विश्वविद्यालयों में पढ़ने जाते हैं। विभिन्न देशों में मौजूद विश्व के शीर्ष 300 विश्वविद्यालयों की गुणवत्ता को लेकर एक रिपोर्ट आई है, जिसके मुताबिक सबसे ज्यादा गुणवत्तापूर्ण विश्वविद्यालय अमेरिका में हैं।

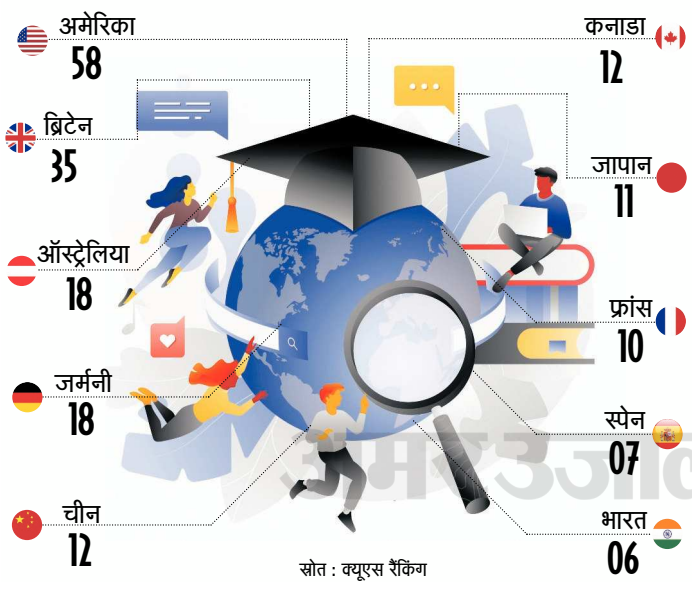

स्रोत : क्यूएस रैंकिंग

सत्संग

सहनशक्ति

उन दिनों स्वामी दयानंद फर्रुखाबाद में गंगातट पर ठहरे हुए थे। उनकी कुटिया से थोड़ी दूरी पर एक झोपड़ी थी, जिसमें एक साधु रहता था। पता नहीं क्यों वह साधु स्वामी जी से बहुत क्रोधित था। हर रोज वह स्वामी जी की कुटिया के पास आकर गाली दिया करता था। जब वह गालियां देकर थक जाता तो वापस अपनी झोपड़ी में आ जाता। दयानंद उसकी गालियां सुनकर मुस्कुराते थे और कोई जवाब नहीं देते थे। एक दिन किसी शिष्य ने स्वामी जी को फलों का टोकरा भेजा उन्होंने टोकरे में से कुछ फल निकाले और उन्हें एक कपड़े में बांधा और बोले, यह फल ले जाकर उस साधु को दे दो। वह व्यक्ति फल लेकर साधु के पास पहुंचा और बोला, यह फल स्वामी जी ने आपके लिए भेजे हैं। साधु दयानंद का नाम सुनते ही चिल्लाते हुए कहा, मैं तो रोज उसे गालियां देता हूं, यह फल उसने मेरे नहीं किसी और के लिए भेजे होंगे। यह सुनकर वह व्यक्ति वापस चला गया, वहां जाकर स्वामी जी को पूरी बात बताई। स्वामी जी उस व्यक्ति से बोले तुम वापस उस साधु के पास जाओ और बोलो कि आप प्रतिदिन जो अमृत वर्षा करते हो उसमें निश्चित ही आपकी शक्ति लगती होगी। यह फल उस शक्ति को बनाए रखने के लिए ही मैंने भेजे हैं ताकि, अमृत वर्षा में कमी न आए। यह सुनकर साधु बहुत लज्जित हुआ। इसके बाद उसने स्वामी दयानंद की कुटिया पर जाकर क्षमा मांगी।

-संकलित